अध्याय - 5

शिल्प एवं उद्योग

भारत एक कृषि प्रधान देश है, परंतु यह शिल्प एवं उद्योग के क्षेत्र में भी विश्व में अग्रणी रहा है। भारत में शिल्प एवं उद्योग अंग्रेजी शासन से पहले काफी विकसित अवस्था में था। यहाँ का प्रमुख उद्योग–वस्त्र उद्योग था। मुगलों के शासन काल में यहाँ से एशिया और यूरोप के देशों में वस्त्र निर्यात किया जाता था। विशेषकर ढ़ाके की मलमल, बंगाल एवं लखनऊ की छींट, अहमदाबाद की धोतियाँ एवं दुपट्टे, नागपुर तथा मुर्शिदाबाद के रेशमी किनारी वाले कपड़े एवं कुछ अन्य सूती वस्त्र का निर्यात बड़ी मात्रा में होता था। इसके बदले सोने एवं चाँदी का आयात होता था। उपभोग की बहुत ही कम वस्तुएँ आयात की जाती थीं जैसे ऊनी कपड़ा, तांबा, लोहा और कागज। एशिया के देशों में चीन से चाय, चीनी मिट्टी के बर्तन, इंडोनेशिया से मसाले तथा इत्र एवं अरब से कहवा, खजूर और शहद आदि का आयात किया जाता था।

अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में भारतीय शिल्प एवं उद्योग की स्थिति खराब होने लगी। मुगल साम्राज्य के पतन के बाद राजनैतिक अस्थिरता और विदेशी आक्रमणों तथा यूरोपीय व्यापारियों के आगमन ने भारतीय व्यापारियों को नुकसान पहुँचाया। कई क्षेत्रीय शासकों ने अपने राज्य की सीमा में प्रवेश करने वाले व्यापारियों पर अधिक कर लगा दिया, जिससे व्यापार में गिरावट आने लगी, इसका उत्पादन पर भी बुरा असर पड़ा। फिर भी भारतीय बुनकरों एवं दस्तकारों की दक्षता का कोई जोड़ नहीं था। उस समय कपड़ा उद्योग के प्रमुख केन्द्र थे– बंगाल में ढाका, गुजरात में अहमदाबाद, सूरत और भड़ौच, उत्तर प्रदेश में लखनऊ, बनारस, जौनपुर और आगरा, कर्नाटक में बंगलोर, तमिलनाडू में कोयम्बटूर एवं मदुरै तथा आंध्रप्रेदश में विशाखापत्तनम और मछलीपट्टम। कश्मीर ऊनी वस्त्र के लिए प्रसिद्ध था। इन उद्योग की उन्नति के कारण सभी औद्योगिक केन्द्र नगर बन गए, जिसके विषय में आप अध्याय 10 में आगे पढ़ेंगे।

© BSTBPC WEB COPY NOT TO BE PUBLISHED

भारत की शिल्पकला एवं औद्योगिक समृद्धि को देखकर यूरोप की कई व्यापारिक कंपनियाँ व्यापार के लिए आने लगीं। अध्याय–2 में आपने पढ़ा है कि सबसे पहले पुर्त्तगालियों ने कालीकट में अपनी कोठियाँ स्थापित की। इंगलैंड की महारानी एलिजाबेथ ने भी ईस्ट इंडिया कंपनी को भारत के साथ व्यापार करने की अनुमति प्रदान की। इंग्लिश ईस्ट इंडिया कंपनी भारत में बहुमूल्य वस्तुएं लाती थी और उसके बदले कपड़े, मसाले आदि भारत से ले जाकर विदेशों में बेचती थी। इस तरह अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक यूरोप, भारत में तैयार वस्तुओं का खरीददार था, परंतु भारत के आर्थिक समृद्धि का प्रधान कारण सूती कपड़ा का हथकरघा उद्योग था।

चित्र 1 – अठारहवीं शताब्दी में भारत में बुनाई के प्रमुख केन्द्र

सोलहवीं शताब्दी में पुर्त्तगालियों का व्यापार सर्वप्रथम कालीकट से शुरू हुआ, इसीलिए उन्होंने सूती कपड़ों को 'कैलिको' नाम दिया। इसी तरह बारीक सूती कपड़ों को यूरोप के लोगों ने सर्वप्रथम अरब व्यापारियों के पास इराक के 'मोसल' नामक शहर में देखा था, जिसकी वजह से बारीक बुनाई वाले सभी सूती कपड़ों को उन्होंने 'मसलिन' नाम दिया। इस संदर्भ मे भारतीय कारीगरों के कौशल का अनुमान इसी से लगया जा सकता है कि "बीस गज लम्बे और एक गज चौड़े बढ़िया मलमल के टुकड़े को एक अंगूठी में से निकाला जा सकता था और इसे बनाने में छः महीना समय लगता था।"

यूरोप का शिल्प उद्योग भारतीय शिल्प–उद्योग के साथ प्रतियोगिता करने में सफल नहीं हो पा रहा था। अतः अपने उद्योग को बढ़ावा देने के लिए इंगलैंड ने सन् 1720 ई० में कैलिको अधिनियम बनाया। इसके अनुसार इंगलैंड में भारत के बने छापेदार सूती कपड़े और छींट के इस्तेमाल पर पाबंदी लगा दी गयी और उनके आयात को इंगलैंड में रोक दिया गया।

इसी समय वहाँ तकनीकी विकास की आवश्यकता महसूस की गयी। वैज्ञानिकों द्वारा किए गए आविष्कारों ने, उद्योग के क्षेत्र में एक बहुत बड़ी क्रांति ला दी, जिसके विषय में आप अध्याय–1 में पढ़ चुके हैं। इस क्रांति के कारण अधिक उत्पादन सभी क्षेत्रों में संभव हो सका। अब ज्यादा कपड़ा बहुत कम कीमत पर इंगलैड में तैयार होने लगा। मैनचेस्टर एवं लंकाशायर वस्त्र उद्योग के बड़े केन्द्र बन गए।

इसके बावजूद भी भारतीय कपड़ों की मांग यूरोप के बाजार में बहुत अधिक थी। उन्नीसवीं शताब्दी में सूरत एवं अहमदाबाद में पटोला बुनाई वाले कपड़े तैयार किए जाते थे, जिसका विदेशों में निर्यात होता था। इसी तरह बारीक मलमल पर जामदानी बुनाई की जाती थी, जिस पर करघे से सजावटी डिजाइनें बनायी जाती थीं। आमतौर पर इसमें सूती और सोने के धागे का इस्तेमाल किया जाता था। ढाका तथा लखनऊ इस तरह के बुनाई के केन्द्र थे। इन कपड़ों को यूरोप में बड़े–बड़े घर के लोगों तथा रजवाड़े परिवार के लोगों द्वारा बहुत अधिक पसंद किया जाता था। इसलिए मंहगे होने के बावजूद भी इनकी मांगें विदेशों में अधिक थीं।

जामदानी बुनाई वाले कपड़े महंगे क्यों होते थे? इसका उपयोग सिर्फ रजवाड़े परिवार के लोग हीं क्यों करते थे?

भारतीय उत्पाद की बढ़ती हुई मांगों को देखकर सन् 1813 ई० में इंगलैंड की सरकार द्वारा 'मुक्त व्यापार की नीति' अपनायी गयी। अभी तक सिर्फ अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी को ही भारत के साथ व्यापार करने का अधिकार था। 'मुक्त व्यापार की नीति' ने सभी अंग्रेजी उद्योगपतियों के लिए भारत में व्यापार करने की स्वंतत्रता प्रदान कर दी। इस नीति का सबसे

चित्र 2 — पटोला बुनाई का नमूना

जामदानी बुनाई का नमूना

पहला प्रहार भारत के वस्त्र उद्योग पर हुआ। अब इंगलैंड के सूती वस्त्र उद्योग को विकसित करने के लिए भारतीय निर्माताओं के साथ आयात निर्यात करने में भेदभाव का सिलसिला शुरू किया गया। अंग्रेजी सरकार का यह उद्देश्य था कि ऐसे कानूनों को बनाया जाए, जिनके सहारे भारत से कच्चे माल का आसानी से निर्यात किया जा सके और तैयार माल को भारत में बेचा जा सके। मशीनों की वजह से अधिक उत्पादन होने लगा। अब वे इंगलैंड में ही नहीं, बल्कि भारत में भी बाजार खोजने लगे, ताकि उनके उत्पादित कपड़ों की खपत हो सके। अतः इंगलैंड के व्यापारी अब इंगलैड का कपड़ा लेकर भारत में बेचने के लिए आने लगे। इस समय तक इंगलैंड का उद्योग काफी उन्नति कर चुका था, जिससे भारत में भी सस्ते दामों के कारण मशीनों द्वारा बने हुए कपड़े बिकने लगे। मुक्त व्यापार की नीति एक तरफा नीति थी। भारत से जो सामान इंगलैंड जाता था, उस पर वहाँ आयात कर लगता था, लेकिन जो सामान भारत में आता था, उस पर कोई कर नहीं लगता था। इसलिए भारत में इंगलैंड के सामान सस्ते दामों पर उपलब्ध होते थे। परिणामस्वरूप भारतीय बुनकरों एवं सूत

मुक्त व्यापार की नीतिः— इस नीति के द्वारा भारतीय व्यापार पर कंपनी का एकाधिकार समाप्त हो गया। अब इंगलैंड का कोई भी व्यक्ति भारत के साथ स्वत्रंत रूप से व्यापार कर सकता था।

WEB COPY, NOT TO BE PUBLISHED

कातने वालों की आर्थिक स्थिति बिगड़ने लगी।

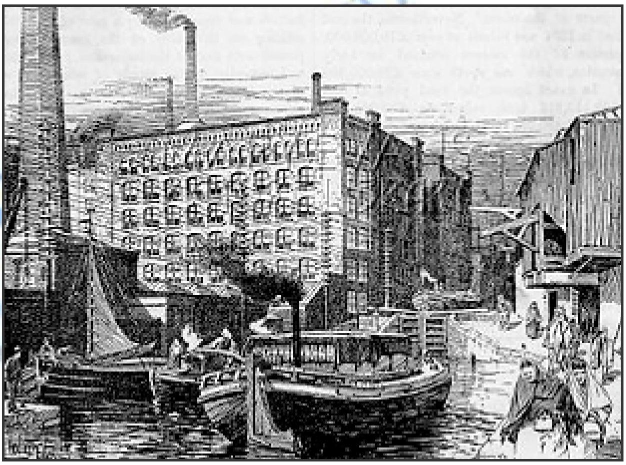

चित्र 4 – इंगलैंड का सूती वस्त्र कारखाना

यद्यपि उन्नीसवीं शताब्दी में भारत द्वारा इंगलैंड को निर्यात की जानेवाली वस्तुओं में वृद्धि हुई, लेकिन यह वृद्धि सिर्फ कच्चे माल के रूप मे हुई। भारत को अब मजबूर किया जाने लगा कि वह उन चीजों का निर्यात करे जिनकी अंग्रेजी उद्योगों को आवश्यकता थी। जैसा कि अध्याय–3 में आपने पढ़ा है कि अंग्रेज कपास, नील, अफीम, जूट आदि जैसे कच्चे माल के उत्पादन को प्रोत्साहन देने लगे। वे किसानों से मनमाने दाम पर माल खरीदते थे और उन्हें अनाज की जगह नकदी फसल उपजाने को बाध्य करते थे। इंगलैंड में खाद्यान्न की भी कमी थी, अतः भारत से अनाज का भी निर्यात किया जाता था। यहाँ तक कि भारत में अकाल के समय भी अनाज का निर्यात किया जाता था। दूसरी तरफ कच्चा माल के लिए अधिक भूमि का उपयोग किए जाने से भी देश में खाद्यान्न की कमी होने लगी। अंग्रेजों का एकमात्र उद्देश्य यह था कि किसी तरह उनके उद्योगों को समाप्त करके अपना उद्योग विकसित किया जाय।

अंग्रेजों की आर्थिक नीतियों से भारतीय शिल्प एवं उद्योग का धीरे–धीरे पतन होने लगा। रेलवे के विकास ने ग्रामीण क्षेत्रों में भी इंगलैड की वस्तुओं को पहुँचाना शुरू किया। अब हस्तशिल्प की वस्तुओं की कीमतें बढ़ गयीं और मशीन निर्मित चीजें बाजार में सस्ती मिलने लगीं। अंग्रेजी शासन से पहले कृषि, हस्त–शिल्प एवं कुटीर उद्योग का बहुत बढ़िया संतुलन था, लेकिन कुटीर उद्योग एवं हस्तशिल्प के विनाश ने इस संतुलन को नष्ट कर दिया। शिल्प एवं उद्योग में लगे हुए कारीगर अब शहर छोड़कर गाँवों में लौटने लगे और खेती करने को बाध्य हो गए। इस तरह इंगलैंड में मशीनों के आविष्कार एवं अंग्रेजों की भारत के प्रति व्यापारिक नीतियों ने भारत में निःऔद्योगिकिकरण (De-industrialisation) की स्थिति पैदा कर दी।

कृषि पर दबाव बहुत बढ़ गया, जिससे भारत में बेरोजगारी और गरीबी की समस्या उत्पन्न हो गयी। इसे आप अध्याय–3 में विस्तृत रूप से पढ़ चुके हैं।

उद्योग में लगे हुए भारतीय कारीगर उद्योग को छोड़ कृषि के तरफ क्यों लौट गएँ?

> निःऔद्योगिकिरण का अर्थ होता है– जब देश के लोग शिल्प एवं उद्योग को छोड़कर खेती को अपनी जीविका का आधार बना लें।

इंगलैंड में जहाँ हथकरघा उद्योग के विनाश का स्थान नये मशीनी उद्योगों ने ले लिया, वहाँ भारत के दस्तकारों एवं बुनकरों के विनाश का स्थान किसी अन्य उद्योगों ने नहीं लिया। इसका प्रमुख कारण था– भारत में पूँजी की कमी, तकनीकी शिक्षा का अभाव, वैसे भारतीयों की कमी जो औद्योगिक विकास की भावना रखते हों तथा अंग्रेजों की मुक्त व्यापार की नीति। इसके बावजूद भी उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कुछ भारतीय मशीनी उद्योग की स्थापना की तरफ आकर्षित हुए। सबसे पहले उन्होंने वस्त्र उद्योग की स्थापना की क्योंकि इसके कारखाने को खोलने के लिए कम पूँजी की आवश्यकता थी, उसके बाद जूट एवं कोयला खान उद्योगों की भी स्थापना की गयी।

सन् 1854 में बंबई में पहला सूती वस्त्र का कारखाना कावस जी नानाजी दाभार नामक एक पारसी व्यापारी ने स्थापित किया। सन् 1880 ई० तक पूरे भारत में 56 सूती कपड़ा मिलें स्थापित हो चुकी थीं। इन कारखानों के लिए मशीनें विदेशों से लायी जाती थीं। भारत में कपड़ा उद्योग की प्रगति ने विदेशों को चिंता में डाल दिया। फिर भी भारतीय उद्योगपतियों के सामने समस्या यह थी कि यदि किसी तरह अंग्रेजी सरकार भारतीय उद्योगों को बढ़ावा देने का कार्य करती, तो उत्पादन क्षमता में वृद्धि की जा सकती थी। अतः उन्होंने मांग की कि इंगलैंड से आ रहे कपड़ों पर सरकार विशेष कर लगाए ताकि वे भारत में यहाँ के बने हुए कपड़ों से मंहगा बिके। लेकिन अंग्रेजों ने ऐसी नीति नहीं अपनायी जिससे भारत का औद्योगिक विकास धीमा रहा।

चित्र 5 – बंबई स्थित सूती कपड़ा मिल

© BSTBPC WEB COPY NOT TO BE PUBLISHED

सन् 1855 ई० में बंगाल के रिशरा में पहली जूट मिल स्थापित की गयी। इसी तरह सन् 1906 में कोयला खान उद्योग की शुरुआत भी की गयी।

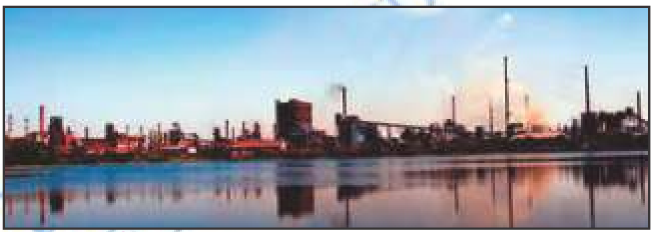
चित्र 6 – टाटा आयरन एण्ड स्टील कारखाना

बीसवीं शताब्दी में स्थापित महत्वपूर्ण उद्योग लौह उद्योग था। सन् 1907 में जमशेद जी टाटा के द्वारा तत्कालीन बिहार (झारखंड) के साकची नामक स्थान पर टाटा आयरन एण्ड स्टील कंपनी (टिस्को) की स्थापना की गयी। यही स्थान आज जमशेदपुर के नाम से जाना जाता है। यहाँ स्टील का उत्पादन होने लगा।

अंग्रेजी सरकार ने इंगलैंड के कपड़ा उद्योग को बढ़ावा देने के लिए क्या किया? भारतीय उद्योगपतियों को यह सुविधा क्यों नहीं मिली?

भारत में स्टील के उत्पादन से भारतीयों को क्या लाभ मिला?

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध एवं बीसवीं शताब्दी के शुरुआत में भारत में कागज, चीनी, आटा आदि की मिलें भी खोली गयीं। यहाँ नमक, अभ्रक और शोरे जैसे खनिज उद्योगों की भी स्थापना हुयी। मशीनों पर आधारित उद्योगों के अलावे नील, चाय और कॉफी जैसे बगान उद्योग का भी विकास हुआ, जिसके विषय में आप अध्याय–3 में पढ़ चुके हैं। इन उद्योगों में विदेशी पूँजी का ही निवेश ज्यादा था। अंग्रेज मुनाफा कमाने के लिए भारतीय उद्योगों को अपनी पूँजी लगाकर प्रोत्साहन देना शुरू किए, ताकि उन उद्योगों पर उनका वर्चस्व बना रहे। अंग्रेजों ने बैंकों पर भी अपना प्रभाव जमा रखा था, जहाँ से उन्हें आसानी से कम ब्याज पर कर्ज मिल जाता था, जबकि भारतीयों को इसके लिए बहुत परेशानी उठानी पड़ती थी और उन्हें ऊँचे दर पर ब्याज देना पड़ता था।

इस तरह भारत में औद्योगिक विकास का यह क्रम धीमी गति से बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक तक यों ही चलता रहा है लेकिन उसका तेजी से विकास सन् 1914 के बाद ही हो सका। 1945 ई० तक इंगलैंड को दो विश्वयुद्धों एवं कई आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ा। इस अवधि में इंगलैंड का पूरा ध्यान युद्ध सामग्री, यथा अस्त्र–शस्त्र निर्माण में

© BSTBPC WEB COPY NOT TO BE PUBLISHED

लगा रहा तथा मालवाहक जहाजों को युद्ध सामग्री ढोने के काम में लगा दिया गया। परिणामतः इंगलैंड से भारत में आने वाले सामानों में कमी होने लगी, जिससे भारत में उत्पादित वस्तुओं की बिक्री बढ़ गयी और उत्पादन पर उसका अच्छा प्रभाव पड़ा। इससे भारतीय उद्योगपतियों का लाभ बहुत बढ़ गया। अब सिर्फ भारत में ही नहीं, बल्कि इंगलैंड तथा यूरोप के अन्य देशों में भारत में निर्मित वस्त्रों की मांग बढ़ गयी, जिसकी वजह से उसकी कीमत में पाँच गुना तक की बढ़ोतरी हो गयी। इन दो विश्वयुद्धों के बीच भारतीय उद्योगों को काफी बढ़ावा मिला, विशेषकर कपड़ा उद्योग काफी विकसित हुआ।

इस तरह भारत में औद्योगिक विकास का एक नया दौर शुरू हुआ। परिणाम स्वरूप समाज में दो नये सामाजिक वर्गों का उदय हुआ– औद्योगिक पूँजीपति वर्ग और आधुनिक मजदूर वर्ग।

औद्योगिक पूँजीपति वर्ग वे थे, जो भारतीय उद्योग में अपना पूँजी निवेश करते थे। सन् 1920 के बाद विदेशी पूँजी निवेश में कमी होने लगी। इस काल में हो रहे औद्योगिक विकास ने भारतीयों को पूँजी निवेश के लिए प्रेरित किया और यहाँ के पूँजीपतियों ने विदेशी कंपनियों से सूती कपड़ा एवं इस्पात उद्योग के क्षेत्र में विदेशी कंपनियों को खरीदकर भारत का औद्योगिक विकास किया।

सन् 1920 के दशक से ही जी०डी० बिड़ला भारतीय उद्योगपतियों का एक संघ बनाना चाहते थे। इस उद्देश्य से सन् 1927 में 'फेडरेशन ऑफ इंडियन चैम्बर्स ऑफ कॉमर्स एण्ड इंडस्ट्री (FICCI) की स्थापना की गयी। यह पूरे भारत में व्यापारिक हितों के लिए काम करने वाली व्यापारिक संस्था बन गयी।

शिल्प एवं उद्योग तथा मजदूरों का जीवनः– सन् 1850 ई० के बाद से भारत में मशीनों वाले उद्योग खोले जाने लगे थे। सबसे बड़ा उद्योग कपड़ा बनाने और सूत कातने का उद्योग था, जिसमें सबसे ज्यादा मजदूर काम करते थे। दूसरा था जूट उद्योग और तीसरा कोयला उद्योग।

मशीन उद्योग के शुरू होने से पूर्व भारत में किस तरह का उद्योग था? मशीनी उद्योग की आवश्यकता भारतीयों को क्यों पड़ी?

WEB COPY NOT TO BE PUBLISHED ©BSTBPC

भारत में सूती कपड़ा उद्योग का मुख्य केन्द्र बंबई था, जूट और चाय उद्योग का मुख्य केन्द्र बंगाल था। यहाँ श्रमिकों की संख्या भारत में सबसे अधिक थी। उनके रहने और कार्य करने की परिस्थितियाँ बहुत शोचनीय थीं। वे एक दिन में 15–16 घंटे से लेकर 18 घंट तक काम करते थे। अवकाश की कोई व्यवस्था नहीं थी। उनके रहने की जगह भी अच्छी नहीं होती थी। वे कारखानों के बगल में ही स्थित छोटी–छोटी झुग्गी झोपड़ियों में रहते थे, जहाँ सफाई एवं पानी की कोई भी सुविधा उपलब्ध नहीं थी।

चित्र 7 – कोयला खदान में काम करता श्रमिक

चित्र 8 – मजदूरों का आवास

मजदूरों को समय पर वेतन का भी भुगतान नहीं होता था। अगर मशीन खराब हो जाय या माल कम तैयार हो तो इसमें मजदूरों की कोई गलती नहीं होती थी, फिर भी मालिक उनके वेतन से कटौती कर लेता था। इतना ही नहीं यदि मजदूर की तबियत खराब हो जाती थी, तो उसकी चिकित्सा की व्यवस्था करना तो दूर, उस दिन काम पर नहीं आने के कारण उसके वेतन में कटौती कर ली जाती थी।

कोयला खदानों के मजदूरों की दशा तो और भी दयनीय थी। झरिया और गिरीडीह के कोयला खानों के श्रमिकों के काम के घंटे प्रातः 6 बजे से शाम 6 बजे तक थे। स्त्रियाँ एवं बच्चे भी भूमिगत खानों में काम करते थे। वहाँ प्रायः दुर्घटनाएँ हुआ करती थीं। यद्यपि सन् 1923 के बाद सरकार ने दुर्घटना बीमा योजना की शुरुआत कर दी थी, लेकिन मुआवजे की राशि लेने के लिए बहुत परेशानी उठानी पड़ती थी।

इतना हीं नहीं स्त्री–पुरुष एवं बच्चों को गर्मी में 14 घंटों एवं जाड़ा में 12 घंटों तक काम

© BSTBPC NOT TO BE PUBLISHED WEB COPY

करना पड़ता था। एक तरफ काम का बोझ होता था, दूसरी तरफ रोजगार की कोई सुरक्षा नहीं होती थी। ऐसी परिस्थिति में मजदूरों के पास संगठन बनाने एवं अपनी मांगों को सरकार के समक्ष रखने के अलावे कोई उपाय नहीं था। लेकिन इससे उसकी नौकरी चले जाने का भय था। सन् 1880 में बिजली के बल्ब के लग जाने से काम के घंटे में और वृद्धि होने लगी। अतः मजदूरों ने अब उद्योगपतियों के खिलाफ जगह–जगह पर विरोध प्रदर्शन करना शुरू कर दिया। उनकी प्रमुख प्रारंभिक मांगें थीं– काम के घंटों में कमी, साप्ताहिक अवकाश और कारखानों में काम के दौरान घायल हुए श्रमिकों को मुआवजा। भारतीय उद्योगपतियों को उनकी मांगें उचित नहीं लगीं, क्योंकि काम के घंटे कम होने से उत्पादन में कमी हो जाती, मालिकों का खर्च बढ़ जाता और कारखानों में बनी वस्तुओं का दाम बढ़ जाता। ऐसी स्थिति में इंगलैंड की बनी वस्तुएँ सस्ती और भारत में बनी वस्तुएँ महंगी हो जातीं और भारतीय उद्योग का विकास धीमा पड़ जाता।

चित्र 9 – श्रमिकों का जीवन

उस समय इंगलैंड के उद्योगपतियों ने भारतीय मजदूरों का साथ दिया। अतः अंग्रेजी सरकार ने सन् 1881 एवं उसके बाद के समय में मजदूरों की स्थिति में सुधार के लिए कई नियम बनाए, जिनसे स्त्री–पुरुष एवं बाल मजदूरों के काम करने के घंटे तथा उनकी दैनिक मजदूरी तय की गयी। फिर भी अभी मजदूरों की स्थिति दयनीय ही बनी रही। आवश्यक सुविधा प्राप्त करने के लिए मजदूरों ने हड़ताल करना आरंभ कर दिया। सन् 1920 तक देशभर में कई हड़तालें हुयीं। इससे पूर देश के मजदूरों में एकता की भावना भी आयी, जिससे प्रेरित होकर सन् 1920 में ही मजदूरों ने ऑल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस (AITUC) नामक संगठन बनाया, जो मजदूरों के हितों की रक्षा करने वाली संस्था बनी। आगे चलकर यही मजदूर भारत के स्वतंत्रता आंदोलन को मजबूत बनाने में भी सहायक रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने उनके लिए 'न्यूनतम मजदूरी कानून' बनाकर मजदूरी दरों को निश्चित किया तथा उनकी स्थिति में सुधार लाने के लिए प्रयत्नशील रही।

WEB COPY NOT TO BE PUBLISHED © BSTBPC

स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार भारत के शिल्प एवं उद्योग के विकास के लिए भी सतत् प्रयत्नशील रही। एक 'औद्योगिक नीति' बनायी गयी जिसके द्वारा कुटीर उद्योग को प्रोत्साहन देने के लिए भी कारगर कदम उठाए गए।

अभ्यास

आइए याद करें–

1. सही विकल्प को चुनें।

(i) अठारहवीं शताब्दी में भारत का प्रमुख उद्योग निम्नलिखित में से कौन था?

(क) वस्त्र उद्योग (ख) कोयला उद्योग (ग) लौह उद्योग (घ) जूट उद्योग

(ii) फेडरेशन ऑफ इंडियन चैम्बर्स ऑफ–कामर्स ऐण्ड इंडस्ट्री (FICCI) की स्थापना कब हुई?

(क) सन् 1920 में (ख) सन् 1927 में (ग) सन् 1938 में (घ) सन् 1948 में

(iii) जूट उद्योग का प्रमुख केन्द्र कहाँ था?

(क) गुजरात (ख) आंध्रप्रदेश (ग) बंगाल (घ) महाराष्ट्र

(iv) सन् 1818 में अंग्रेजी सरकार ने किस उद्देश्य से मजदूरों के लिए नियम बनाए?

(क) मजदूरों की स्थिति में सुधार के लिए (ख) अधिक उत्पादन के लिए

(ग) प्रशासनिक सुविधा के लिए (घ) अपने आर्थिक लाभ के लिए

(v) ऑल इंडिया ट्रेड युनियन कांग्रेस (AITUC) की स्थापना कब हुई?

(क) 1818 में (ख) 1920 में (ग) 1938 में (घ) 1947 में

निम्नलिखित के जोड़े बनाएँ।

(क)	जूट उद्योग	(क)	लखनऊ
(ख)	ऊनी वस्त्र उद्योग	(ख)	बंगाल
(ग)	जामदानी बुनाई	(ग)	चम्पारण
(घ)	लौह उद्योग	(घ)	कश्मीर
(ङ)	नील बगान उद्योग	(ङ)	जमशेदपुर

आइए विचार करें–

(i) कैलिको अधिनियम के क्या उद्देश्य थे?

(ii) मुक्त व्यापार की नीति से आप क्या समझते हैं?

(iii) भारतीय उद्योगपतियों को भारत में उद्योग की स्थापना के मार्ग में क्या–क्या बाधाएँ थीं?

(iv) मजदूरों के हित में पहली बार कब नियम बनाया गया? उन नियमों का मजदूरों पर क्या प्रभाव पड़ा?

(v) स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने मजदूरों की स्थिति में सुधार के लिए कौन से कदम उठाए?

आइए करके देखें–

(i) अठारहवीं शताब्दी के भारत के मानचित्र को देखकर यह बताएँ कि कौन सा राज्य सूती कपड़ा उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्र था?

(ii) इस पाठ के आधार पर यह बताएँ कि मजदूरों को अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए क्या करना चाहिए?

❖❖❖

© BSTBPC WEB COPY NOT TO BE PUBLISHED